226
परशु/प

परशुराम तन्त्र

सम्पादक

श्री भद्रशील शर्मा, एम० ए०

26
शुप

प्रकाशक

पं० देवीदत्त शुक्ल स्मारक

कल्याण मन्दिर प्रकाशन

प्रयाग—६

भगवान श्री परशुराम

परशुराम तन्त्र

सम्पादक

श्री भद्रशील शर्मा, एम० ए०

प्रकाशक

पं० देवीदत्त शुक्ल स्मारक
कल्याण मन्दिर प्रकाशन
प्रयाग—६

प्रकाशक
कल्याण मन्दिर प्रकाशन
अलोपीबाग मार्ग
प्रयाग—६

२२६
परशुराम

प्राप्ति-स्थान
कल्याण मन्दिर प्रकाशन
अलोपीबाग मार्ग
प्रयाग—६

द्वितीय संस्करण (चैत्र शुक्लाष्टमी २०३५)

मुद्रक
परा वाणी प्रेस
अलोपीबाग मार्ग
प्रयाग—६

परिचय

प्रस्तुत तन्त्र को श्री पीताम्बरा-पीठ, दतिया ने पहले पहल प्रकाशित किया था और उसे पीठ के संस्थापक 'राष्ट्र-गुरु' परम पूज्य श्री १००८ श्री स्वामी जी महाराज ने निःशुल्क वितरित करने की कृपा की थी। प्रतियों के समाप्त हो जाने पर भी तन्त्र-प्रेमियों की माँग बनी रही। हमारे निवेदन पर प० पू० श्री स्वामी जी ने इसका नवीन संस्करण सम्वत् २००२ में कल्याण मन्दिर द्वारा प्रकाशित करने की अनुमति प्रदान करने कृपा की, जिसके लिए हम श्री चरणों के हृदय से आभारी हैं। उक्त संस्करण का अध्यात्म-प्रेमियों ने स्वागत किया और अब उसका यह द्वितीय संस्करण परिवर्द्धित तथा परिष्कृत रूप में प्रकाशित किया जा रहा है!

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि श्री पीताम्बरा-पीठ, दतिया में भगवती श्री पीताम्बरा बगलामुखी का अति सुन्दर मन्दिर तो है ही, भगवान् श्री परशुराम का भी

एक मन्दिर है। इस मन्दिर का वर्णन पीठ के एक भक्त पंडित रामेश्वर तिवारी के शब्दों में इस प्रकार है—

'भगवान् परशुराम की गणना दशावतारों में की जाती है। भगवान् परशुराम वैदिक ऋषि, आगम सम्प्रदाय के आचार्य, ब्राह्मण-धर्म के संस्थापक, एक-तन्त्र राज्य-व्यवस्था के उन्मूलक, प्रजातन्त्र-प्रणाली के प्रवर्तक, अन्याय एवं अत्याचार के प्रध्वंसक, पराक्रम और पौरुष की प्रतिमा, शक्ति के अवतार थे। भगवान् परशुराम की स्थापना की कामना पूज्य श्री महाराज के हृदय में बहु-काल से थी एवं यदा-कदा पूज्य श्री महाराज जी इस इच्छा को व्यक्त भी किया करते थे। भगवान् परशुराम की स्थापना न केवल इसलिए उपादेय है कि भगवान् परशुराम के मन्दिर देश में दुर्लभ हैं, अपितु इसलिये कि देश को उस पराक्रम एवं शक्ति की निरन्तर आवश्यकता है, जिसके कि वे अवतार थे।

भगवान् परशुराम का मन्दिर प्राचीन शिवालय, वनखण्डी महादेव के पीछे, साधकावास-मार्ग के पश्चिम में, सीतासागर सरोवर के तट पर स्थित है। मन्दिर के समक्ष यज्ञ-मण्डप है, जो कि सीता-सागर सरोवर के तट पर है। मन्दिर दक्षिण से उत्तर को ओर लम्बा

एवं पश्चिम से पूर्व को ओर चौड़ा है। भगवान् परशुराम की मूर्ति मन्दिर के दक्षिण भाग में स्थापित है एवं उत्तर में साधनोपयोगी कक्ष है। मन्दिर के आगे विस्तृत बरामदा है, जहाँ से यज्ञ-मण्डप के दर्शन एवं सीतासागर सरोवर का मनोहारी दृश्य दृष्टिगोचर होता है। भगवान् परशुराम के पूज्य मन्दिर का शिलान्यास श्री महाराज के कर-कमलों द्वारा वैशाख शुक्ल तृतीया सम्वत् २०२० एवं स्थापना आषाढ़ शुक्ल तृतीया २०२० को हुई थी। मन्दिर का निर्माण श्री चरणों के शिष्य जगदीशनारायण जी तहसीलदार की स्मृति में, उनकी धर्म-पत्नी की इच्छानुसार, उनके भाई श्री जगमोहनमाल श्रीवास्तव ने करवाया था।'

उक्त मन्दिर में भगवान् श्री परशुराम का जो दिव्य विग्रह स्थापित है उसी का चित्र इस पुस्तिका में संलग्न है।

❋ ❋ ❋

जमदग्नि-रेणुका के पुत्र-रूप में भ० परशुराम ने अवतार ग्रहण किया था। इनके चार बड़े भाई थे—१ रुमन्वान, २ सुषेण, ३ वसु, ४ विश्वावसु। मतान्तर से इनके नाम इस प्रकार भी कहे गए हैं—१ वसु, २ विश्वावसु, ३ वृहद्भानु, ४ वृहत्कण्व।

चैत्र मास, पुनर्वसु नक्षत्र, तृतीया तिथि को परशुराम का जन्म हुआ था। उन्होंने गन्ध-मादन पर्वत पर तप कर महादेव को प्रसन्न किया था और अति तेजोमय 'परशु' अस्त्र प्राप्त किया था।। विघ्न-राज गणेश से भी उन्होंने 'परशु-विद्या' सीखी थी।

अपने पिता जमदग्नि की आज्ञा से परशुराम ने अपनी माता का शिर काट डाला था। अन्य चार भाइयों ने आज्ञा-पालन करने से अस्वीकार कर दिया था। उन्हें जमदग्नि ने शाप देकर हत-बुद्धि कर दिया किन्तु इनसे प्रसन्न होकर इन्हें वर माँगने को कहा। तब परशुराम ने यह निवेदन किया कि—'पहले मेरी माता को जिला दीजिए और फिर यह वर दीजिए कि मैं परमायु को प्राप्त करूँ। मेरे भाई प्रकृतिस्थ हों तथा युद्ध में कोई मुझे जीत न सके।' प्रतापी सिद्ध पिता ने ऐसा ही वरदान उन्हें प्रदान किया।

क्षत्रिय राजा कार्तवीर्य सहस्रार्जुन बड़ा ही अत्याचारी था। उसने जमदग्नि की अनुपस्थिति में आश्रम उजाड़ डाला और उनकी गाय का हरण किया। इस पर परशुराम ने जाकर सहस्रार्जुन की भुजाओं को परशु से काट डाला। सहस्रार्जुन के साथियों ने आकर बदले में जमदग्नि की हत्या कर दो। तब परशुराम ने

क्षत्रियों के नाश को प्रतिज्ञा की और उन्होंने इक्कीस बार संहार कर पृथ्वी को क्षत्रिय-विहीन कर दिया। बाद में अपने स्वर्गस्थ पितामह महर्षि ऋचीक के आदेश से वे क्षत्रिय-वध के कर्म से विरत हुए।

अन्त में परशुराम महेन्द्र नामक पर्वत पर रहकर तपस्या करने लगे।

मत्स्य, विष्णु आदि पुराणों में परशुराम भगवान् विष्णु के छठे और भागवत पुराण में सोलहवें अवतार कहे गए हैं।

❀ ❀ ❀

मन्त्र-महार्णव में परशुराम मन्त्र यह बताया है—

'ॐ रां रां ॐ रां रां ॐ परशु-हस्ताय नमः।

वहीं परशुराम-गायत्री मन्त्र का भी उल्लेख निम्न प्रकार किया गया है—

'ॐ जामदग्नाय विद्महे महावीराय धीमहि तन्नः परशुरामः प्रचोदयात्।'

षडङ्ग एवं कर-न्यास का क्रम इस प्रकार लिखा है—

ॐ जामदग्नाय	हृदयाय नमः	अंगुष्ठाभ्यां नमः
ॐ विद्महे	शिरसे स्वाहा	तर्जनीभ्यां स्वाहा
ॐ महावीराय	शिखायै वषट्	मध्यमाभ्यां वषट्
ॐ धीमहि	कवचाय हुँ	अनामाभ्यां हुँ
ॐ तन्नः परशुरामो	नेत्र-त्रयाय वौषट्	कनिष्ठाभ्यां वौषट्

ॐ प्रचोदयात् अस्त्राय फट् करतल-कर-पृष्ठाभ्यां फट्—

भगवान् परशुराम के ध्यान तीन प्रकार के प्रस्तुत तन्त्र में निर्दिष्ट किये गये हैं। यथा—

१ सात्त्विक ध्यान

सात्त्विकं श्वेत-वर्णं च भस्मोद्धूलित-विग्रहम्।
अग्निहोत्र-स्थलासीनं नाना-मुनि-गणावृतम्॥
कम्बलासनमारूढं स्वर्ण-तार-कुशाङ्गुलिम्।
श्वेत-वस्त्र-द्वयोपेतं जुह्वन्तं शान्त-मानसम्॥

२ राजस ध्यान—

ध्यायेच्च राजसं रामं कुंकुमारुण-विग्रहम्।
किरीटिनं कुण्डलिनं परश्वब्ज-वराभयान्॥
करैर्दधन्तं तरुणं विप्र-क्षत्रौघ-सम्वृतम्।
पीताम्बर-धरं काम-रूपं बाला-निरीक्षितम्॥

३ तामस ध्यान—

ध्यायेच्च तामसं क्षत्र-रुधिराक्त-परश्वधम्।
आरक्त-नेत्रं कर्णस्थ-ब्रह्म-सूत्रं यम-प्रभम्॥
धनुष्टङ्कार - संघोष - सन्त्रस्त - भुवन-त्रयम्।
चतुर्बाहुं मुशलिनं संक्रुद्ध-भ्रातृ-संयुतम्॥

जैसी कामना हो, वैसी ही रूप-कल्पना कर मन्त्र का अनुष्ठान करना चाहिए।

❋ ❋ ❋

भगवान् श्री परशुराम की उपासना के फल-

स्वरूप साधक अपनी विविध कामनाओं की पूर्ति कर सकते हैं। सन्तान, विवाह, कृषि, वर्षा, भोग-विलास, धन-सम्पत्ति, वाक्-सिद्धि आदि किसी भी साध्य या असाध्य अभीष्ट की सिद्धि के लिए श्री परशुराम के मन्त्र का प्रयोग किया जा सकता है (श्लोक २२-२३)।

महामारी से रक्षा, शीतला-शान्ति, सर्व-शत्रुओं का नाश, रोगों का निवारण, संग्राम में शत्रुओं पर विजय-प्राप्ति तथा सकुशल गृह-आगमन आदि उद्देश्यों की भी पूर्ति इनकी उपासना से होती है (श्लोक २७-३१)।

इन सब प्रयोगों की विधि का संकेत इस तन्त्र में संक्षेप में दिया हुआ है। ठीक भी है। मन्त्र-विद्या 'गुरु-वक्त्र-गम्या' है ही। जिस प्रकार अन्य मन्त्रों की साधना-विधि गुरु-मुख से ही जान कर फल-प्रद होती है, उसी प्रकार भगवान् परशुराम-मन्त्र को सिद्ध करने के लिए विज्ञ साधक का मार्ग-दर्शन आवश्यक है। तथापि तन्त्र के अन्त में एक बड़ा ही सरल प्रयोग भी दिया गया है, जिसे सभी श्रद्धालु लोग सहज ही कर सकते हैं और लाभान्वित हो सकते हैं। वह प्रयोग है भगवान् परशुराम के बारह नामों का तीनों सन्ध्याओं (प्रातः, मध्याह्न, सायं) में भक्ति-पूर्वक पाठ करना। बारह नाम इस प्रकार हैं—

१ आद्यो रामो, २जामदग्न्यः, ३क्षत्रियाणां कुलान्तकः ।
४ परश्वधधरो,५ दाता, ६ मातृहा, ७ मातृ-जीवकः ॥
८ समुद्र-तीर-निलयो, ९ महेश-पठिताखिलः ।
१०गोत्राण-कृद्, ११गो-प्रदाता, १२विप्र-क्षत्रिय-कर्मकृत् ॥

शुद्ध होकर एकाग्र-चित्त से इन नामों का नियमित रूप से पाठ करने से पाठ करनेवाले को अकाल-मृत्यु का, दरिद्रता का और वंश-नाश का भय नहीं होता तथा उसे राज्यैश्वर्य भोगने का अवसर मिलता है।

इसमें सन्देह नहीं कि वर्तमान युग में, जब आधुनिक अणु-शस्त्रास्त्रों का प्रभाव दिनानुदिन व्यापक होता जा रहा है और उनका अधिकाधिक दुरुपयोग किया जा रहा है, भगवान् परशुराम का आदर्श ही कल्याणकारी सिद्ध हो सकता है।

प्रस्तुत परशुराम तन्त्र प्रसिद्ध और अप्राप्य 'मेरु-तन्त्र' के २६वें 'दशावतार-मन्त्र प्रकाश' से इसी उद्देश्य से उद्धृत कर प्रकाशित किया जा रहा है कि अध्यात्म-साधन के प्रेमी साधक इससे लाभ उठा सकें। यदि उनका ध्यान इस ओर थोड़ा भी आकृष्ट हुआ, तो हम अपना प्रयास सार्थक समझेंगे।

चैत्र शुक्लाष्टमी, २०३५ —सम्पादक

परशुराम तन्त्र

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि राम-मन्त्रं समाहृतम् ।
आकल्पमेक एवायं जामदग्न्यो महा-बलः ॥
दुष्ट-क्षत्र-तमो-ध्वंसो रेणुकोद्भूत-भास्करः ॥ १ ॥
ब्रह्म-क्षत्राय विद्महे क्षत्रियान्ताय धीमहि ।
तन्नो रामः ,प्रचोदयात् ॥ २ ॥
भरद्वाजो मुनिः प्रोक्तो गायत्रं छन्द ईरितम् ।
श्रीमान् परशुरामोऽस्य देवता भक्त-वत्सलः ।
अष्टेषु ऋक्षि वेदार्णैर्मनोः प्रोक्तं षडङ्गकम् ॥ ६ ॥
नेत्रयोः कर्णयोर्नासा-द्वये चाधर-युग्मके ।
स्तनयोर्भुजयोः पार्श्व-द्वयेऽप्यर्चोर्विन्यसेत् पदम् ॥ ४ ॥
आधारे हृदये मूर्ध्नि क्रमात् पादान् प्रविन्यसेत् ।
के दृशि श्रोत्र-नासायां कपोले हनु-वक्त्रयोः ॥ ५ ॥
कण्ठांस-बाहु-हस्तेषु पार्श्व-हृत्-पृष्ठकोदरे ।
नाभि-कटचोर्गुदे लिङ्गे ऊर्वोर्वा जानु-जङ्घयोः ॥ ६ ॥
पादे च विन्यसेद् वर्णांस्ततो ध्यायेत् त्रिधा तनुम् ॥ ७ ॥

सात्विकं श्वेत-वर्णं च भस्मोद्धूलित-विग्रहम् ।
किरीटिनं कुण्डलिनं वरं स्वक्ष-वराभयान् ।
करैर्दधानं तरलं विप्रं क्षत्र-वधोद्यतम् ।
पीताम्बर-धरं काम-रूपं बाला-निरीक्षितम् ॥ ८ ॥

ध्यायेच्च तामसं क्षत्र-रुधिराक्त-परश्वधम् ।
आरक्त-नेत्रं कर्णस्थ-ब्रह्म-सूत्रं यम-प्रभम् ॥ ९ ॥

धनुष्टङ्कार - निर्घोष - सन्त्रस्त-भुवन-त्रयम् ।
चतुर्बाहुं मुशलिनं राजसं क्रुद्धमेव च ॥ १० ॥

वैष्णवे तु यजेत् पीठे देवाग्राच्च चतुर्दले ।
जमदग्निं च कालं च रेणुकां काममर्चयेत् ॥ ११ ॥

तद्दलेषु षडङ्गानि तद्-बाह्येऽष्ट-दले यजेत् ।
दिक्षु वेदान् विदिक्-पत्रेषूपवेदांस्ततो यजेत् ॥ १२ ॥

ततश्चाष्ट-दले पूज्या विद्बुद्धाश्चावतारकाः ।
ब्रह्मास्त्रं वैष्णवास्त्रं च रौद्रं वायव्यमेव च ॥ १३ ॥

आग्नेयं चैव नागास्त्रं मोहनं स्तम्भनं तथा ।
ऐन्द्रपालिकमस्त्रं च महा-पाशुपतं तथा ॥ १४ ॥

पूजयेद्दश-पत्रेषु द्वादशारे ततोऽर्चयेत् ।
कश्यपं च भरद्वाजं विश्वामित्रं च गौतमम् ॥ १५ ॥

वशिष्ठं नारदं चात्रिं पुलस्त्यं पुलहं क्रतुम् ।
याज्ञवल्क्यं भार्गवं च षोडशारे ततो यजेत् ॥ १६ ॥

संहिताश्च पुराणानि मीमांसां न्यायमेव च ।
सांख्यं पातञ्जलं शिल्पं वेदाङ्गानि च षट् क्रमात् ॥ १७

सर्वाण्युप-पुराणानि चेतिहास-पुराणकम् ।
स्मृतीस्तु भूपुराग्रे च दिगीशानायुधानि च ॥ १८ ॥

वर्ण-लक्षं जपेन्मन्त्रं सिताढ्य-घृत-पायसैः ।
हुनेद् ब्राह्मण-भोज्यान्तं कृत्वा सिद्धो भवेन्मनुः ॥ १९ ॥

ब्रह्म-कर्म-रतो नित्यं गायत्री-जप-तत्परः ।
स एव जायते सिद्धो नान्य-विप्रः कदाचन ॥ २० ॥

गायत्री प्रथमं पादं पूर्वं कृत्वा जपेन्मनुम् ।
लक्षं प्राग्वद्धुनेद्रामं सात्विकं तत्र चिन्तयेत् ॥ २१ ॥

सन्तानार्थं विवाहार्थं कृष्यर्थं वर्षणाय च ।
विषयार्थं धनार्थं च वाक्-सिद्धयर्थमुदाहृतम् ॥ २२ ॥

सहस्रमयुतं लक्षं प्रयुतं कोटिमेव च ।
साध्य-कृच्छ्रेति कृच्छ्रे च दैव-साध्ये त्वसाध्यके ॥ २३ ॥

कार्या जपस्य संख्येयं क्रमाज्ज्ञेया दशांशतः ।
होमः सर्वत्र विज्ञेयः प्रत्यवाय-निराकृतौ ॥ २४ ॥

तावदेव जपेद् विद्वान् गायत्री-जप-तत्परः ।
मनागपि न कर्त्तव्यो ब्रह्म-द्वेषः कदाचन ॥ २५ ॥

गायत्री-मध्य-चरण-युक्तं मन्त्रं जपेद्धुनेत् ।
तिलौदनाज्यं रामं तु राजसं तत्र भावयेत् ॥ २६ ॥
देश-ग्राम-पुरादीनां बालानां च गवामपि ।
रक्षणं स्यान्महामारी-शीतला-शान्तये तथा ॥ २७ ॥
गायत्र्यन्तिम-पादेन युक्तं मन्त्रं जपेद् ध्रुवम् ।
होमः सर्षप-तैलाक्तैस्तामसं चिन्तयेद् विभुम् ॥ २८ ॥
सर्व-शत्रु-विनाशः स्याद् रोगादीनां तथा क्षयः ।
एवं कुर्याद्यमुद्दिश्य तस्य नाशो भवेद् ध्रुवम् ॥ २९ ॥
वैशाख-शुक्ल-पक्षे च तृतीयायां तु वार्षिकी ।
भवेदस्य महा-पूजा तां भक्तः प्रयतश्चरेत् ॥ ३० ॥
राम-भक्तं द्विजं नत्वा संग्रामे याति चेन्नृपः ।
अवश्यं स रिपूञ्जित्वा कुशली स्व-गृहं व्रजेत् ॥ ३१ ॥
राम-भक्तेन यो दत्तः पुस्तके लिखितो मनुः ।
स तु सिद्धि-प्रदो ज्ञेयो नास्ति तस्य पुरस्क्रिया ॥ ३२ ॥
यत्किञ्चित्-पुस्तकारूढं राम-भक्त-मुखोद्गतम् ।
यन्त्रं मन्त्रोथ वा विद्या तत्सिद्धं नास्ति संशयः । ३३ ॥
ज्ञात्वा षोडश-संस्कारैः संस्कृतं चार्य-वंशजम् ।
कुल-द्वय-विशुद्धं तु राम-मन्त्राधिकारिणम् ॥ ३४ ॥
फिरङ्गा यवनाश्चीनाः खुरासानाश्च म्लेच्छजाः ।
राम-भक्तं प्रदृष्ट्वैव त्रस्यन्ति प्रणमन्ति च ॥ ३५ ॥

कृत्वा तु बालुका-मूर्तिं श्रीरामस्यार्चयेद् वने ।
शान्तं शत्रु-मदं कुर्य्यात् कुसुमानि च वै हुनेत् ॥ ३६ ॥
राज्ञोऽमुकस्य कटकं जुहोमीति तथा वदेत् ।
सप्ताहार्वाक्तस्य सैन्यं नष्टं तावन्मितं भवेत् ॥ ३७ ॥
महेन्द्राग्रे च काश्यां च यो जपेन्निर्जने वने ।
वर्षादर्वाक् तस्य रामः प्रत्यक्षो जायते ध्रुवम् ॥ ३८ ॥
सोम-वारे काशिकायां गयायां पितृ-पक्षके ।
सूर्पारके पौर्णमास्यां प्रयागे तु मृगे रवौ ॥ ३९ ॥
गोदावर्य्यां सिंहगेऽर्के गङ्गा-द्वारे घट-स्थिते ।
सूर्य्य-ग्रहे कुरु-क्षेत्रे रामो गच्छति सर्वदा ॥ ४० ॥
आद्यो रामो जामदग्न्यः क्षत्रियाणां कुलान्तकः ।
परशवध-धरो दाता मातृहा मातृ-जीवकः ॥ ४१ ॥
समुद्र-तीर-निलयो महेश-पठिताखिलः ।
गो-त्राण-कृद् गो-प्रदाता विप्र-क्षत्रिय-कर्म-कृत् ॥ ४२ ॥
द्वादशैतानि नामानि त्रि-सन्ध्यं यः पठेन्नरः ।
नाप-मृत्युर्न दारिद्रयं न च वंश-क्षयो भवेत् ॥ ४३ ॥
श्रीमत्परशुरामस्य गायत्र्येषा महाद्भुता ।
राज्य-कृत् कलि-भूपानां सर्व-तन्त्रेषु गोपिता ॥ ४४ ॥
॥ इति श्रीमेरु-तन्त्रे षड्-विंशे दशावतार-
मन्त्र-प्रकाशे परशुराम-तन्त्रं समाप्तम् ॥

श्री परशुराम-प्रशस्ति

त्रिभुवन-गुरु-शिष्यश्चाप-वेदे मनीषी,
निशित-परशु-लूनाशेष-राजन्य-वंशः ।
जयति मुनि-समज्या-रज्यदात्मा सहस्रा-
र्जुन-भुज-वन-खण्डाङ्गार-कृज्जामदग्न्यः ॥

—अजमेर प्रस्तर-लेख (१२ वीं शती)

जीयात् परशुरामोऽसौ क्षत्रैः क्षुण्णं रणाहतैः ।
सन्ध्यार्क-बिम्बमेवोर्वी-दातुर्यस्यैति ताम्रताम् ॥

—देवपाल का मान्धाता पट्ट-लेख (१२२५ ई०)

कृत्वा लेखनिकां कुठारमुदय-द्वारे नियुद्धाध्वरे ।
यः क्षत्र-क्षत-जात-जात-सुमषीं मेलाम्बुमम्भोनिधिम् ।
पत्रं दिग्-वलयं स्वमक्षररचणं निर्वर्तयन् शासनम् ।
विप्रेभ्यः पृथिवीमदादुदयिनीं रामाय तस्मै नमः ॥

—परमार जयसिंह-जयवर्मन का पट्ट-लेख (१२७४ ई०)

द्विज-करे क्षितिमक्षत-शासनो,
दधदनुद्धव-कृद्रिपु-योषिताम् ।
जय-यशो-भुवनं जयति प्रधीः,
स परशुः खलु राम इति श्रुतः ॥

—नाग का अजयगढ़ प्रस्तर-लेख (१२७८ ई०)

सर्वाधिकार सुरक्षित

प्रकाशक :
कल्याण मन्दिर प्रकाशन
अलोपीबाग मार्ग, प्रयाग—६